हमारा सहयोग और मार्गदर्शन

आपका परिश्रम और जज्बा

सार्थक संवाद

Make Your Mission Meaningful

67th BPSC Mains Spl.

ट्रेंड विश्लेषण एवं रणनीति

भारतीय राजव्यवस्था

– कुमार सर्वेश

DELHI CENTRE : B-4, 37, 38, 39, Ansal Building, Commecial Complex, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-09

PATNA CENTRE : 2nd Floor, Azad Hind Building, Arya Kumar Road Opp. Maharana Pratap Bhawan, Patna - 800004

7645040117, 8700008957, 9818073460

ट्रेंड-विश्लेषण और रणनीति

बीपीएससी के द्वारा आयोजित मुख्य परीक्षा में सामान्य अध्ययन के विभिन्न खण्डों से पूछे जाने वाले प्रश्नों में यदि किसी खंड ने सबसे ज्यादा ध्यान आकर्षित किया है, तो वह है भारतीय राजव्यवस्था खंड। इस खंड से पूछे जाने वाले प्रश्नों और उनके रूझानों पर अगर गौर करें, तो वे सामान्यत: भारतीय संविधान एवं भारतीय राजव्यवस्था की व्यापक समझ के साथ-साथ एप्लीकेशन पर आधारित होते हैं। कई बार उत्कृष्टता की दृष्टि से इस खंड के प्रश्न संघ लोक सेवा आयोग के द्वारा पूछे जाने वाले प्रश्नों को भी चुनौती देते प्रतीत होते हैं। साथ ही, चूँकि इस खंड से पूछे जाने वाले प्रश्नों की प्रकृति आरम्भ से ही गतिशील और एप्लीकेशन-आधारित रही है, इसीलिए इन्हें रेस्पोंड करना हमेशा से चुनौतीपूर्ण रहा है। इसके लिए निरंतर अपडेशन की जरूरत होती है। बिना अपडेशन के इसके साथ न्याय कर पाना मुश्किल है। स्पष्ट है कि भारतीय राजव्यवस्था के प्रश्नों के रुझान पाँच चीजों की माँग करते हैं:

1. **कॉम्प्रेहेंसिव अंडरस्टैंडिंग**
2. **तकनीकी शब्दावलियों की व्यापक समझ**
3. **अपडेशन**
4. **एप्लीकेशन, और**
5. **इन्टर-डिसिप्लिनरी एप्रोच**

इस खंड की तैयारी करते वक्त इन पहलुओं के साथ इस बात को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि कई बार ऐसे प्रश्न बिहार के विशेष सन्दर्भ में पूछे जाते हैं, इसीलिए मुख्य परीक्षा में शामिल होने वाले छात्रों की तैयारी की रणनीति भी इसी के परिप्रेक्ष्य में निर्धारित होनी चाहिए। स्पष्ट है कि भारतीय राजव्यवस्था खंड से पूछे जाने वाले प्रश्नों का उत्तर लिखते वक्त आवश्यकता इस बात की है कि उत्तर को वर्तमान सन्दर्भों से जोड़कर लिखा जाए, चाहे प्रश्न पारंपरिक प्रकृति के हों या फिर समसामयिक प्रकृति के, और उत्तर को बिहार स्पेसिफिक भी बनाया जाए। ऐसी स्थिति में आपके उत्तर अन्य छात्रों के उत्तर से अलग भी होंगे और उनमें वैल्यू एडीशन की संभावना भी प्रबल होगी।

66वीं बीपीएससी (मुख्य) परीक्षा

66वीं बीपीएससी (मुख्य) परीक्षा में पूछे गए प्रश्नों की प्रकृति का विश्लेषण किया जाए, तो हम पाते हैं कि इस खंड से पूछे गए चार प्रश्नों में से तीन प्रश्न, जो राष्ट्रपति, संसद और भारतीय राज्यों के असमान विकास से सम्बंधित थे, एप्लीकेशन पर आधारित थे। इनमें भारतीय राज्यों के असमान विकास से सम्बंधित प्रश्न इन्टर-डिसिप्लिनरी एप्रोच पर आधारित प्रश्न है। केवल एक प्रश्न पारम्परिक प्रकृति का प्रतीत होता है, और वह है केन्द्र-राज्य से सम्बंधित प्रश्न। अब बारी-बारी से इन प्रश्नों पर विचार किया जाये:

1. **भारत के राष्ट्रपति की भूमिका परिवार के उस बुजुर्ग के समान है जो सभी प्राधिकार रखता है, किन्तु यदि घर के 'शैतान युवा सदस्य उसकी न सुनें, तो वह कुछ भी प्रभावी नहीं कर सकता है। मूल्यांकन कीजिए।**

   विश्लेषण: राष्ट्रपति से सम्बंधित यह प्रश्न भारतीय संवैधानिक मैकेनिज्म में उनकी वास्तविक स्थिति पर आधारित है। बेहतर है कि इस प्रश्न की शुरुआत संसदीय व्यवस्था के संवैधानिक मैकेनिज्म और उसमें राष्ट्रपति की संवैधानिक स्थिति से किया जाए। भले ही औपचारिक रूप से समस्त कार्यपालक शक्तियाँ उनमें निहित की गयी हैं, पर उनसे यह अपेक्षा की गयी है कि वे प्रधानमन्त्री और मंत्री-परिषद् की सलाह पर काम करें। इस रूप में उनकी प्रभावशीलता बहुत हद तक इस बात पर निर्भर करती है कि प्रधानमन्त्री और मंत्री-परिषद् कहाँ तक उनकी सलाह को अहमियत दे रहे हैं। इस बात में बहुत हद तक सच्चाई है, इससे इनकार नहीं किया जा सकता है। लेकिन, यह सिक्के का महज एक पहलू है। सिक्के का दूसरा पहलू यह भी है कि राष्ट्रपति के पास प्रधानमन्त्री और मंत्री-परिषद् की सलाह को पुनर्विचार के लिए वापस करने का अधिकार भी है। इसके अतिरिक्त, भले ही राष्ट्रपति के सन्दर्भ में स्वविवेक की चर्चा संविधान में कहीं नहीं की गयी है, पर उनके पास भी परिस्थितिजन्य विवेकाधिकार है जिसका समय-समय पर प्रयोग किया गया है। ये अधिकार राष्ट्रपति के पद की गरिमा और मर्यादा की पृष्ठभूमि में जो नैतिक दबाव उत्पन्न करते हैं, उस दबाव की अनदेखी कर पाना किसी भी सरकार के लिए संभव नहीं रह जाता है। यह स्थिति राष्ट्रपति को अधिकार-सम्पन्न बनाती है और इस स्थिति में वे महज प्रधानमन्त्री और मंत्री-परिषद् की कृपा पर निर्भर भर नहीं रह जाते, वरन् संवैधानिक दायित्वों के निर्वहन में सक्षम प्राधिकार के रूप में सामने आते हैं।

2. **भारतीय संघीय ढ़ाँचा संवैधानिक रूप से केन्द्र सरकार की ओर उन्मुख है। व्याख्या कीजिए।**

विश्लेषणः यह प्रश्न अपनी प्रकृति में पारंपरिक किस्म का है। लेकिन, इस प्रश्न का उत्तरः पारम्परिक और गैर-पारम्परिक, दोनों तरीके से लिखा जा सकता है। गैर-पारम्परिक तरीके से उत्तर लिखे जाने की स्थिति में अपेक्षाकृत अधिक अंक की संभावना है। उदाहरणतः, अगर इस प्रश्न को लिखने के क्रम में भारतीय संघवाद की विकसनशील प्रकृति को रेखांकित किया जाता है और इस क्रम में केन्द्रीय रुझान वाले संघीय ढाँचे में संघ-राज्य सम्बंध के आनुपातिक सन्तुलन में आने वाले परिवर्तनों और भारतीय संघवाद के सहकारी संघवाद की ओर बढ़ते रुझानों को रेखांकित किया जाना चाहिए। इस क्रम में हाल के वर्षों में भारतीय संघवाद के एक बार फिर से केन्द्रवाद की ओर बढ़ते रुझानों की ओर इशारा करना भी महत्वपूर्ण होगा। यह एप्रोच आपके प्रश्नों के मार्किंग पोटेंशियल को बढ़ायेगा।

3. **भारतीय राज्यों के असमान विकास ने कई सामाजिक-आर्थिक एवं राजनीतिक समस्याओं को जन्म दिया है। बिहार के विशेष सन्दर्भ में कथन का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए।**

विश्लेषणः इस प्रश्न में भारतीय राज्यों के असमान विकास के राजनीतिक प्रभावों के बहाने अर्थव्यवस्था और राजव्यवस्था को एक-दूसरे से सम्बद्ध किया गया है और छात्रों से यह अपेक्षा की गयी है कि वे बिहार के विशेष सन्दर्भ में इस प्रश्न का उत्तर दें। इस असमान विकास ने गरीबी एवं बेरोजगारी से लेकर सामाजिक-आर्थिक पिछड़ापन और जातिवाद जैसी सामाजिक-आर्थिक समस्याओं को जन्म दिया है, तो स्थानीयता एवं क्षेत्रवाद के उभार एवं जातिगत एवं धार्मिक पहचान पर आधारित राजनीति जैसी राजनीतिक समस्याओं को भी। इसी असमान विकास ने बिहार के विभाजन और पृथक राज्य के रूप में झारखण्ड के गठन का मार्ग प्रशस्त किया। इससे पहले, इसी ने बिहार को लम्बे समय तक जातिगत संघर्ष और नक्सलवाद की समस्या में उलझाये रखा जिसके कारण बिहार की धरती रक्तरंजित रही। फिर, ये तमाम चीजें मिलकर अविकास एवं पिछड़ापन को बनाये रखने में मददगार साबित हो रही हैं। इन सबकी बिहार के विशेष परिप्रेक्ष्य में चर्चा अपेक्षित है।

4. **भारत की संसद राष्ट्रीय एकीकरण का एक प्रभावी मंच है। विवेचना कीजिए।**

विश्लेषणः जहाँ तक राष्ट्रीय एकीकरण के प्रभावी मंच के रूप में भारतीय संसद का प्रश्न है, तो इसे संसद की संरचना और क्रिया-प्रणाली के विस्तृत परिप्रेक्ष्य में देखे जाने की जरुरत है। इस क्रम में यह बतलाना है कि कैसे यह राष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाती है।

इस प्रकार अबतक की चर्चा से यह स्पष्ट है कि अगर बीपीएससी परीक्षाओं को लेकर आप वाकई गंभीर हैं, तो आवश्यकता इस बात की है कि आप नोट्स, गाइड्स एवं चुटका के मोह से मुक्त हों, शार्टकट की तलाश छोड़ें और टेक्स्ट-बुक रीडिंग्स को प्राथमिकता दें, ताकि विषय-वस्तु की मुकम्मल समझ के साथ-साथ एप्लीकेशन डेवलप हो सके और तथ्यों के सापेक्षिक महत्त्व का भी अंदाजा लग सके। साथ ही, आवश्यकता समाचारपत्र के जरिए टेक्स्टबुक की इस समझ को विकसित और अपडेट करने की भी है।

65वीं बीपीएससी (मुख्य) परीक्षा

नवम्बर,2020 में आयोजित 65वीं बीपीएससी मुख्य परीक्षा में पूछे गए प्रश्नों को मैं ऐसे प्रश्नों की श्रेणी में रखता हूँ जो अमूमन देखने में आसान लगते हैं, पर वे आसान होते नहीं हैं। ऐसे प्रश्नों के साथ अक्सर समस्या यह होती है कि इन्हें हल्के में लिया जाता है जिसके कारण कई बार प्रश्न में मौजूद ऐसे शब्दों की अनदेखी हो जाती है जो उत्तर की दिशा एवं संरचना को निर्धारित करने में अहम् भूमिका निभाते हैं। फलतः प्रश्न के साथ न्याय कर पाना मुश्किल होता है। दूसरी बात, **सामान्य प्रश्नों की स्थिति** में अक्सर इस बात की अनदेखी की जाती है कि इनके उत्तर को सामान्य तरीके से भी लिखा जाता है और विशिष्ट तरीके से भी। सामान्य तरीके से उत्तर लिखा जाना अक्सर औसत मार्किंग का कारण बनता है और विशिष्ट तरीके से उत्तर लिखा जाना अक्सर बेहतर मार्किंग का आधार तैयार करता है। विशेष रूप से बीपीएससी परीक्षाओं के सन्दर्भ में इस पहलू की अनदेखी इसकी तैयारी करने वाले छात्रों के द्वारा भी की जाती है और इसकी तैयारी करवाने वाले शिक्षकों के द्वारा भी। उपरोक्त पहलुओं को इस साल पूछे जाने वाले प्रश्नों के सन्दर्भ में देखा जाना अपेक्षित है:

1. क्या आप इस वक्तव्य से सहमत हैं कि हमारे संविधान ने एक हाथ से मौलिक अधिकार दिए हैं, किन्तु दूसरे हाथ से उसे वापस ले लिए हैं?

विश्लेषण: भारतीय संविधान भाग 3 में उल्लिखित मूलाधिकारों के जरिए नागरिक सहित व्यक्ति के अधिकारों को सुनिश्चित करने की कोशिश की गयी है, लेकिन इस बात का विशेष रूप से ध्यान में रखा गया है कि एक व्यक्ति के अधिकार दूसरे व्यक्ति के अधिकारों से न टकराएँ और व्यक्ति के अधिकारों सामाजिक हितों के बीच सामंजस्य बना रहे। इसी के मद्देनजर युक्तियुक्त निर्बन्धन की बात की गयी है, लेकिन अदालत ने निर्बंधनों की युक्तियुक्तता के निर्धारण का अधिकार अपने पास सुरक्षित रखते हुए और युक्तियुक्त निर्बंधनों की संकीर्ण परिप्रेक्ष्य में व्याख्या करते हुए यह सुनिश्चित किया है कि युक्तियुक्त निर्बंधन उन मूलाधिकारों वापस लेने वाले उपकरण में न तब्दील हो जाएँ जिन्हें सुनिश्चित करते हुए संविधान-निर्माताओं ने राजनीतिक एवं सामाजिक लोकतंत्र को सुनिश्चित करने का काम किया है। इसी के मद्देनजर नियंत्रण एवं संतुलन को सुनिश्चित करते हुए संवैधानिक उपचार की व्यवस्था भी की गयी है और न्यायिक पुनर्विलोकन के अधिकार को भी सुनिश्चित किया गया है। इसकी पुष्टि पिछले पाँच दशकों के अनुभवों से भी होती है। अदालत ने न केवल मूल ढाँचे की संकल्पना प्रस्तुत करते हुए न्यायिक पुनर्विलोकन को इसका हिस्सा माना, वरन् विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया को विधि-सम्यक प्रक्रिया के जरिये प्रतिस्थापित करते हुए उस संवैधानिक मैकेनिज्म को मजबूत भी किया जो मूलाधिकारों के संरक्षण को सुनिश्चित भी किया। अगर ऐसा नहीं होता, तो आज न तो अभिव्यक्ति की आजादी संरक्षण एवं संवर्द्धन संभव हो पाता और न ही गरिमामय जीवन के अधिकार के रूप में प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार की व्याख्या ही संभव हो पाती।

2. भारतीय संसद एक गैर-प्रभुता सम्पन्न विधि-निर्मात्री संस्था है। इस कथन की समीक्षा कीजिए।

विश्लेषण: यद्यपि भारतीय संवैधानिक मैकेनिज्म में संसदीय राजनीति की संकल्पना ब्रिटेन से ली गयी है, फिर भी आपवादिक परिस्थितियों को छोड़ विधायन के लिए संसद को अधिकृत किया गया है। लेकिन, भारतीय संसद ब्रिटिश पार्लियामेंट की तरह संप्रभु नहीं है क्योंकि संसद के द्वारा बनाई गयी विधि न्यायिक पुनर्विलोकन के दायरे में आती है और उसकी संवैधानिकता के निर्धारण के लिए अदालत को अधिकृत किया गया है। दरअसल भारत में न तो संसद सर्वोच्च है और न ही न्यायपालिका, वरन् भारत में सर्वोच्चता संविधान की है और उसका झुकाव अदालत की ओर है। अदालत ने मूल ढाँचे की गतिशील संकल्पना प्रस्तुत करते हुए उसकी व्याख्या के अधिकार को अपने पास सुरक्षित रखा और फिर सन् 1978 में विधि सम्यक प्रक्रिया की संकल्पना प्रस्तुत करते हुए अपनी संवैधानिक स्थिति को मजबूत किया और इस तरह संसद द्वारा निर्मित विधि पर अपने शिकंजे को कसा। यह स्थिति गोलकनाथ वाद,1967 और केशवानन्द भारती वाद,1973 में सुप्रीम कोर्ट के द्वारा दिए गए निर्णय से पुष्ट हुई और मिनर्वा मिल वाद ने इस निर्णय पर अंतिम रूप से मुहर लगा दी। इसने संसद और अदालत के बीच लम्बे समय से चल रहे टकराव को तार्किक परिणति तक पहुँचाते हुए अन्तिम रूप से यह साबित कर दिया कि भारतीय संसद संप्रभु नहीं है। स्पष्ट है कि इस प्रश्न में 'गैर-प्रभुता सम्पन्न' पदबंध अहम् है और प्रश्न की माँग को निर्धारित करने और उत्तर की दशा एवं दिशा को निर्धारित करने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है।

3. भारतीय राजनीतिक दलीय व्यवस्था राष्ट्रोन्मुखी न होकर व्यक्ति-उन्मुखी है। इस तथ्य को बिहार के परिप्रेक्ष्य में स्पष्ट कीजिए।

विश्लेषण: बीपीएससी मुख्य परीक्षा में इस टॉपिक से प्रश्न पूछने की बारंबारता अपेक्षाकृत अधिक है, इसीलिए इस टॉपिक पर मुकम्मल समझ की आवश्यकता है। यह प्रश्न अपेक्षाकृत आसान है, लेकिन इस प्रश्न को मुश्किल बनाती है **'राष्ट्रोन्मुखी' शब्द की मौजूदगी**। इससे पहले भी 63वीं बीपीएससी (मुख्य) परीक्षा में भारतीय राजनीतिक दलीय व्यवस्था से सम्बंधित प्रश्न पूछे गए, और उस प्रश्न में **'वर्णनात्मक राजनीति' पदबंध के रूप में तकनीकी शब्द मौजूद** थे। अक्सर क्लास में ऐसे तकनीकी शब्दों की चर्चा परीक्षा में प्रश्न पूछे जाने के बाद तो की जाती हैं, पर पूछे जाने के पहले नहीं। ऐसी स्थिति परीक्षा-भवन में ऐसे तकनीकी शब्दों की व्याख्या आपको खुद करनी होती है, और यह तबतक संभव नहीं है जब तक कि आपकी अंडरस्टैंडिंग और एप्लीकेशन विकसित न हो। इसलिए इस प्रश्न के उत्तर को लिखने के लिए आपको यह समझना होगा कि वर्णनात्मक राजनीति को यहाँ विकास की राजनीति के विरोध में और व्यक्ति-केन्द्रित राजनीति को राष्ट्रोन्मुखी राजनीति के विरोध में रखकर देखा जा रहा है। मतलब यह कि 'राष्ट्रोन्मुखी राजनीति' मुद्दों पर आधारित राजनीति या विकासात्मक राजनीति का पर्याय है, या यों कह लें कि मुद्दों पर आधारित विकासात्मक राजनीति का पर्याय है। अगर आप इस सामान्य-सी बात को समझते हैं, तो आपके लिए इस प्रश्न के साथ न्याय कर पाना आसान होगा, अन्यथा उत्तर लिखते हुए आप हवा

में तीर चलते रहेंगे जिसके लिए अंग्रेजी में 'ठमंजपदह ।तवनदक जीम ठनीे' च्तवअमतइ का प्रयोग होता है। निश्चय ही इस प्रश्न में भारतीय राजनीति के साथ दशकों के अनुभवों के आलोक में जवाहर लाल नेहरु, इन्दिरा गाँधी और राजीव गाँधी से लेकर वी. पी. सिंह, अटल बिहारी वाजपेयी और नरेन्द्र मोदी तक इसी व्यक्ति-केन्द्रित करिश्माई राजनीति के प्रतीक हैं जिन्होंने भारतीय दलीय व्यवस्था में मुद्दों पर आधारित राजनीति को हाशिए पर पहुँचाया है। इसकी चर्चा करते हुए प्रश्न के दूसरे हिस्से पर आने की जरुरत है और यह दिखाया जाना है कि किस प्रकार पिछले तीन दशकों के दौरान बिहार की राजनीति लालू यादव-नीतीश कुमार के इर्द-गिर्द सिमटी रही और इसने पहचान-आधारित राजनीति की केन्द्रीयता को सुनिश्चित की। यद्यपि यह भी सच है कि नीतीश कुमार ने व्यक्ति-केन्द्रित राजनीति एवं विकासात्मक राजनीति की ब्लेंडिंग करते हुए उसका कॉकटेल प्रस्तुत किया, तथापि संतुलन व्यक्ति-केन्द्रित राजनीति के पक्ष में बना रहा।

4. **ई-शासन से आप क्या समझते हैं? ई-शासन को लागू करने में बिहार की स्थिति का वर्णन करें।**

   विश्लेषण: इस बार पूछे गए उपरोक्त चारों प्रश्नों में सबसे सीधा और सबसे आसान प्रश्न यही था जिसमें सांकेतिक रूप से लोकतान्त्रिक उत्तरदायित्व एवं जवाबदेही को सुनिश्चित करने में पारदर्शिता की भूमिका को रेखांकित करते हुए यह बतलाने की जरुरत थी कि इस सन्दर्भ में ई-गवर्नेंस की क्या भूमिका है। उपरोक्त पहलुओं पर सांकेतिक चर्चा करते हुए इस बात को विस्तार से बतलाये जाने की जरुरत है कि बिहार में ई-गवर्नेंस के सन्दर्भ में अबतक क्या प्रगति रही है और इसका वर्तमान परिदृश्य क्या है?

64वीं बीपीएससी (मुख्य) परीक्षा

भारतीय राजव्यवस्था खंड से पूछे गए प्रश्न अपेक्षा के अनुरूप ही हैं, सिवा एक प्रश्न के; और वह है: **'बहुत अधिक राजनीतिक दल भारत के लिए अभिशाप है। इस तथ्य को बिहार के परिप्रेक्ष्य में स्पष्ट कीजिये।'** यह बीपीएससी में पूछे जाने वाले प्रश्नों की प्रकृति के अनुरूप ही है क्योंकि इस खंड से पूछे जाने वाले प्रश्न समझ एवं एप्लीकेशन पर आधारित होते हैं और अद्यतन रुझानों पर आधारित भी। इसके अलावा चाहे न्यायिक सक्रियता पर पूछे जाने वाले प्रश्न हों, या प्रस्तावना एवं उनसे सम्बंधित संवैधानिक उपबंधों पर आधारित, या फिर राज्यपाल की भूमिका; ये सारे प्रश्न अपेक्षित थे।

वर्तमान चुनौतियों के बीच आकार ग्रहण करते प्रश्न:

यहाँ पर इस बात को समझने की जरुरत है कि 64वीं बीपीएससी परीक्षा में पूछे गए प्रश्नों का एक परिप्रेक्ष्य है और अगर उस परिप्रेक्ष्य तक पहुँचने की कोशिश की जाए, तो सहज ही प्रश्नों के निर्मित होने की प्रक्रिया को समझा जा सकता है। उदाहरणत: उस प्रश्न को लिया जा सकता है जिसमें बहुदलीय राजनीतिक व्यवस्था को भारत एवं विशेष रूप से बिहार के परिप्रेक्ष्य में बाधक के रूप में देखा गया है, या राज्यों की राजनीति में राज्यपाल की भूमिका के उद्घाटन की बात की गयी है। इन तमाम प्रश्नों को किसी-न-किसी रूप में राष्ट्रीय विमर्श के एजेंडे में प्रमुखता से जगह मिल रही है और इस रूप में इन प्रश्नों पर राजनीति की छाप देखी जा सकती है। शायद यही कारण है कि 'राज्यपाल के कठपुतली होने से सम्बंधित प्रश्न ने अकारण राजनीतिक विवाद को जन्म दिया है, जबकि 'राष्ट्रपति रबड़ स्टाम्प के रूप में' से सम्बंधित प्रश्न संघ लोक सेवा आयोग के द्वारा पहले ही पूछा जा चुका है। इस प्रश्न में चर्चा इस बात पर हो रही है कि राज्यपाल को कठपुतली क्यों कहा गया, जबकि अगर चर्चा ही होनी है, तो चर्चा इस बात पर होनी चाहिए थी कि वर्तमान में बिहार के विशेष सन्दर्भ में इस प्रश्न के क्या मायने हैं? इसी प्रकार 'वन नेशन, वन इलेक्शन' के एजेंडे के कारन राजनीतिक दलों की बहुलता को नकारात्मक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया जा रहा है, पर बहुलतावादी लोकतंत्र भारतीय राजनीतिक व्यवस्था की मूल पहचान है और विविधता से भरे समाज की जरुरत भी, लेकिन इस पर कोई चर्चा होती नहीं दिखती।

प्रश्नों की माँग को पहचानना:

अब प्रश्नों की निर्माण-प्रक्रिया और उनके रुझानों के विश्लेषण के पश्चात् में 64वीं बीपीएससी मुख्य परीक्षा में पूछे गए प्रश्नों और उनकी माँग का विश्लेषण अपेक्षित है। इसे निम्न संदर्भों में देखा जा सकता है:

1. **भारतीय संविधान अपनी प्रस्तावना में भारत को एक समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष एवं लोकतान्त्रिक गणराज्य घोषित करता है। इस घोषणा को क्रियान्वित करने के लिए कौन-से संवैधानिक उपबंध दिए गए हैं?**

   विश्लेषण: भारतीय संविधान की प्रस्तावना से अक्सर प्रश्न पूछे जाते हैं। उसमें भी धर्मनिरपेक्षता बीपीएससी का प्रिय टॉपिक है। उदारीकरण ने प्रस्तावना में 'समाजवाद' शब्द की मौजूदगी पर प्रश्नचिह्न खड़ा किया, और बचा-खुचा काम सरकार के नजरिए, जो बाजारवाद की ओर

सार्थक संवाद

उन्मुख है एवं हिंदुत्व के प्रति आग्रहशील है, और हाल के विवादों ने कर दिया, इसलिए इन्हें अपेक्षित प्रश्नों की श्रेणी में रखा जाए। इस प्रश्न में भारतीय संविधान के उन उपबंधों की चर्चा करनी है जो प्रस्तावना के इन पहलुओं को व्यावहारिक रूप प्रदान करते हैं और उन्हें जमीनी धरातल पर उतारते हैं, अब चाहे उन प्रावधानों का सम्बंध मौलिक अधिकार और नीति-निदेशक तत्वों से जुड़ता हो, या फिर संविधान के अन्य उपबंधों से।

2. भारत में राज्य की राजनीति में राज्यपाल की भूमिका का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए। विशेष रूप से बिहार के सन्दर्भ में क्या यह केवल एक कठपुतली है?

विश्लेषण: हाल में स्वविवेक के अधिकारों के दुरुपयोग के सन्दर्भ में राज्यपाल का पद चर्चा में आया और इस पर सुप्रीम कोर्ट ने अपने निर्णय भी दिए, इसलिए ऐसे प्रश्न अपेक्षित थे। इस प्रश्न में बिहार को बेवजह ही घसीटा गया। बिहार के सन्दर्भ में अधिक-से-अधिक दो बिन्दुओं को रेखांकित किया जा सकता है: महागठबंधन से अलग होने के बाद सरकार-गठन को लेकर उत्पन्न होने वाले विवाद में राज्यपाल की भूमिका, और बी. एड. कॉलेज विवाद की पृष्ठभूमि में बिहार के राज्यपाल का स्थानांतरण।

जहाँ तक इस प्रश्न को रेस्पोंड किये जाने का प्रश्न है, तो प्रश्न के पहले हिस्से में राज्यों, विशेष रूप से विपक्षी दल के द्वारा शासित राज्यों की राजनीति में राज्यपाल की भूमिका को रेखांकित किया जाना चाहिए और इस क्रम में यह दिखाया जाना चाहिए कि किस प्रकार राज्यपाल केंद्र के इशारों पर कार्यपालिका के प्रमुख के रूप में अपनी औपचारिक भूमिका से आगे बढ़कर सत्ता की राजनीति में संलिप्त होते चले जाते हैं, और वहाँ की सरकार को अस्थिर करने की कोशिश में लग जाते हैं, या फिर उसके लिए विभिन्न तरीकों से परेशानियाँ उत्पन्न करने की कोशिश में लग जाते। इस क्रम में अरुणाचल प्रदेश में राज्य की भूमिका को लेकर उठाने वाले प्रश्नों के आलोक में पूँछी कमीशन की रिपोर्ट और अरुणाचल वाद में स्वविवेक के सन्दर्भ में सुप्रीम कोर्ट के निर्णय को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।

जहाँ तक राज्यपाल के 'केंद्र के हाथों की कठपुतली' होने का प्रश्न है, तो राज्यपाल की नियुक्ति एवं बर्खास्तगी-प्रक्रिया और पदावधि के दौरान संवैधानिक संरक्षण का अभाव उसे अपने पद पर बने रहने हेतु केंद्र पर निर्भर बना देता है और इसी पृष्ठभूमि में उसके स्वविवेकाधिकार के दुरूपयोग की संभावना जन्म लेती है।

3. भारतीय शासन में न्यायिक सक्रियता एक नवीन धारणा है। विवेचना कीजिये तथा न्यायिक सक्रियता के पक्ष और विपक्ष में दिए गए मुख्य तर्कों को स्पष्ट कीजिए।

विश्लेषण: बीपीएससी का फोकस हमेशा से 'न्यायपालिका' टॉपिक पर रहा है, और यहाँ से प्रश्न पूछने की फ्रीक्वेंसी कहीं अधिक रही है। मई, 2014 के बाद से लेकर जस्टिस दीपक मिश्रा के सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश बनने तक न्यायपालिका के साथ कार्यपालिका एवं विधायिका के बीच टकराव की स्थिति लगातार बनी रही। इस टकराव की पृष्ठभूमि में संविधान द्वारा निर्धारित दायरे के अतिक्रमण के आरोप न्यायपालिका पर लगातार लगते रहे और इसी क्रम में न्यायिक अतिक्रम पर भी चर्चा हुई। ऐसे में इस तरह के प्रश्नों का पूछा जाना लाजिमी है।

इस प्रश्न को रेस्पोंड करते हुए सबसे पहले न्यायिक सक्रियता की संकल्पना की आविर्भावकालीन परिस्थितियों की चर्चा करते हुए इसकी अहमियत को उद्घाटित किया जाना था। इस क्रम में न्यायिक सक्रियता और न्यायिक अतिक्रम के बीच विभेद किया जाना अपेक्षित है और इसी आलोक में उसके पक्ष-विपक्ष में जो भी संभव तर्क दिए जा सकते हैं, उन्हें लिखा जाना चाहिए था।

4. बहुत अधिक राजनीतिक दल भारत के लिए अभिशाप है। इस तथ्य को बिहार के परिप्रेक्ष्य में स्पष्ट कीजिये।

विश्लेषण: यह प्रश्न काफी चौलेंजिंग है, और पूर्वाग्रहपूर्ण भी। इस प्रश्न का सम्बन्ध राजनीतिक बहुलतावाद से जाकर जुड़ता है जिसने भारत की राष्ट्रीय राजनीति को गठबंधन की राजनीति की ओर धकेला। इस प्रश्न में गठबंधन की राजनीति को लेकर पूर्वाग्रह के संकेत मिलते हैं और उसे नकारात्मक रूप में देखते हुए संवृद्धि एवं विकास के रास्ते में अवरोध माना गया है। कम-से-कम आँकड़े इसकी पुष्टि नहीं करते हैं। यहाँ पर इस बात को भी ध्यान में रखने की जरुरत है कि गठबंधन की राजनीति के यदि कुछ नकारात्मक पक्ष हैं, तो कुछ सकारात्मक पक्ष भी, क्योंकि इसने राजनीतिक समावेशन की प्रक्रिया को बल प्रदान किया है जिसके फलस्वरूप सार्थिक-सामाजिक समावेशन में तेजी आयी है। साथ ही, इस तथ्य की भी अनदेखी नहीं की जा सकती है कि जैसे-जैसे गठबंधन की राजनीति शैशवावस्था से बाहर निकलकर परिपक्व हुई, वैसे-वैसे उसकी सीमाएँ भी कम होती चली गईं। इन तमाम पहलुओं पर प्रश्न के पहले हिस्से में सांकेतिक रूप से विचार किये जाने की जरुरत है।

उत्तर के दूसरे हिस्से में इस प्रश्न को बिहार के अनुभवों के विशेष परिप्रेक्ष्य में देखे जाने की जरुरत है। बिहार में हाशिये पर खड़े छोटे जातीय समूह के द्वारा अपनी राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने के लिए राजनीतिक दलों के गठन से जाकर जुड़ता है जिसने राजद, जनता दल यू, लोजपा, रालोसपा, हम, वीआईपी, जाप आदि के आविर्भाव को संभव बनाया। इसके कारण बिहार में राष्ट्रीय राजनीति की मुख्यधारा के राजनीतिक दलों के अलावा क्षेत्रीय एवं स्थानीय दलों की सक्रियता देखने को मिलती है और इस सक्रियता के कारण यहाँ पर मुख्यधारा के राजनीतिक दलों की स्थिति कमजोर है। इसने न केवल जातीय पहचान पर आधारित राजनीति को मजबूती प्रदान करते हुए वोटों के बिखराव को संभव बनाया, वरन् बिहार के राजनीतिक परिदृश्य को जटिल बनाते हुए राजनीतिक-सामाजिक समीकरणों पर आधारित गठबन्धनों और उनकी चुनावी जीत या हार को भी सुनिश्चित किया।

लेकिन, इस प्रश्न का एक और भी आयाम है जिसका सम्बंध भाजपा के बढ़ते हुए राजनीतिक वर्चस्व से जाकर जुड़ता है जिसकी पृष्ठभूमि में 'एक देश, एक चुनाव' के एजेंडे को आगे बढ़ाने और इसके जरिए उस राजनीतिक वर्चस्व को और अधिक मजबूती से स्थापित करने की कोशिश की जा रही है। इसके कारण राजनीतिक बहुलतावाद को नकारात्मक रूप में प्रचारित किया जा रहा है। इस प्रश्न का उत्तर लिखते वक्त इस पहलू की भी अनदेखी नहीं की जा सकती है और इसलिए इसका अवश्य ही ध्यान रखा जाना चाहिए।

दरअसल पिछले तीन दशकों के गठबंधन सरकार के अनुभवों के कारण उसे नकारात्मक रूप में देखे जाने की प्रवृत्ति विकसित हुई है, और इसे इस रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है कि विकास एवं राष्ट्रीय हितों के तकाजे के कारण भारत को गठबंधन सरकार से परहेज करना चाहिए। इस विमर्श को केंद्र में सत्तारूढ़ राष्ट्रीय दलों के द्वारा प्रोत्साहित किया गया और मीडिया के सहारे इसे आम लोगों के बीच लोकप्रिय बनाने का प्रयास करते हुए छोटे एवं स्थानीय दलों के खिलाफ राजनीतिक माहौल बनाने की कोशिश की गयी। इस क्रम में इस बात को भुला दिया गया कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक विविधता से भरे भारत जैसे देश में राजनीतिक बहुलतावाद को नकारना इसकी राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता को खतरे में डालने के समान है।

इस तरह से देखें, तो **भारतीय राजव्यवस्था खंड से पूछे गए चार में से तीन प्रश्न समसामयिक परिदृश्य** से उठाये गए हैं। मतलब यह कि ऐसे खंड जो पारंपरिक प्रकृति वाले प्रतीत होते हैं, उनके साथ भी तबतक न्याय नहीं किया जा सकता है, जबतक हाल में घटी घटनाओं के आलोक में उसे देखने की कोशिश नहीं की गयी हो।

63वीं बीपीएससी (मुख्य) परीक्षा

जनवरी,2019 में 63वीं बीपीएससी मुख्य परीक्षा आयोजित की गयी थी। इस परीक्षा में सामान्य अध्ययन द्वितीय पत्र के भारतीय राजव्यवस्था खंड में पूछे गए प्रश्न प्रश्नों के बदलते हुए पैटर्न की ओर इशारा करते हैं। 64वीं मुख्य परीक्षा की तरह एक बार फिर से 63वीं मुख्य परीक्षा में पूछे जाने वाले प्रश्नों का विश्लेषण अपेक्षित है, ताकि छात्र इस बात को समझ सकें कि किस प्रकार के प्रश्न पूछे जा रहे हैं, क्यों पूछे जा रहे हैं और इनमें क्या लिखना है:

1. स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव के संचालन में भारत के निर्वाचन आयोग की भूमिका की गंभीरता से जाँच करें। इस सम्बन्ध में चुनावी पहचान-पत्र किस उद्देश्य से कार्य करता है?

बिहार लोक सेवा आयोग के द्वारा मुख्य परीक्षा में भारतीय राजव्यवस्था खंड में जिन टॉपिकों को फोकस किया जाता है, उनमें चुनाव-आयोग और चुनाव-सुधार भी शामिल हैं। विशेष रूप से पिछले कुछ वर्षो के दौरान चुनाव आयोग की भूमिका को लेकर लगातार चर्चा होती रही है और गहराते संस्थागत संकट के आयाम इससे भी जुड़ते चले गए। चुनावों की तिथि की घोषणा और ईवीएम-विवाद से लेकर चुनाव-प्रक्रिया के सञ्चालन और मॉडल कोड ऑफ कंडक्ट के क्रियान्वयन तक चुनाव आयोग की भूमिका को लेकर विवाद उभरे। ऐसे स्थिति में इस प्रश्न का पूछा जाना सामायिक भी है एवं प्रासंगिक भी।

जहाँ तक उत्तर की माँग का प्रश्न है, तो इस प्रश्न के दो पहलू हैं: एक, स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव के संचालन में चुनाव आयोग की भूमिका; और दूसरे, मतदाता पहचान-पत्र का उद्देश्य। प्रश्न के पहले हिस्से में व्यावहारिक उदाहरणों के जरिये चुनाव आयोग की भूमिका को लेकर उठाते प्रश्नों पर विचार करना है और इस क्रम में सांकेतिक रूप से इस बात की भी चर्चा करनी है कि आखिर चुनाव आयोग केंद्र सरकार के दबाव से मुक्त रहकर क्यों नहीं काम कर पा रहा है। छात्रों से इस प्रश्न पर गंभीर विश्लेषण की अपेक्षा की गयी है।

2. क्या आप सहमत हैं कि भारतीय राजनीति आज मुख्य रूप से वर्णनात्मक राजनीति की बजाय विकास राजनीति के आस-पास घूमती है? बिहार के सन्दर्भ में चर्चा कीजिए।

यह प्रश्न भी सीधे-सीधे वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य से उठाये गए हैं। दरअसल पिछले ढ़ाई दशकों से यह बात की जा रही है कि भारतीय राजनीति में विकास मतदान-आचरण के महत्वपूर्ण निर्धारक-तत्व के रूप में उभरकर सामने आया है, और इस क्रम में धर्म एवं जाति जैसी पहचान-आधारित राजनीति को हाशिये पर धकेला है। वर्ण, जाति, धर्म, सम्प्रदाय, लिंग, क्षेत्र, भाषा आदि पहचान पर आधारित राजनीति, जिसे वर्णनात्मक राजनीति के रूप में भी जाना जाता है, के मुख्य अवयव हैं। लोकसभा-चुनाव,2014 के दौरान नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में भाजपा ने यह माहौल बनाने की कोशिश की कि पूरा-का-पूरा चुनाव भ्रष्टाचार और विकास के मुद्दों पर लड़ा गया, पर उनके नेतृत्व में राजग सरकार के गठन के बाद भाजपा ने खुद को विकास की राजनीति के पर्याय के रूप में प्रस्तुत करते हुए लगातार विपक्ष-शासित राज्यों में ऐसे माहौल को बनाये रखने का प्रयास किया। यही स्थिति बिहार की राजनीति के सन्दर्भ में नीतीश कुमार के द्वारा सृजित करने की कोशिश की गयी, जबकि वास्तविकता कुछ और है। इसी विरोधाभास की चर्चा इस प्रश्न के उत्तर में की जानी चाहिए और बिहार के विशेष सन्दर्भ में यह दिखाया जाना चाहिए कि किस प्रकार राजनीतिक विमर्श में विकास को जगह तो मिली है, पर वर्णनात्मक राजनीति अभी हाशिये पर नहीं पहुँची है। इसी प्रकार (56-59)वीं मुख्य परीक्षा में बिहार विधानसभा चुनाव, 2015 के दौरान जाति की भूमिका और वर्तमान समय में संघीय सरकार तथा बिहार राज्य के मध्य संबंधों का वर्णन भी समसामयिक परिदृश्य से उठाये गए थे।

3. हाल के दिनों में भारतीय पार्टी की राजनीति पर बढ़ते क्षेत्रीय राजनीतिक दलों के प्रभाव क्या हैं?

इस प्रश्न में यह दिखाना है कि क्षेत्रीय राजनीतिक दलों के उभार ने भारतीय दलगत राजनीति और उसके एजेंडे को किन रूपों में प्रभावित किया है। यह प्रभाव संघीय ढाँचे के अंतर्गत राजनीतिक समीकरणों को किन रूपों में प्रभावित कर रहा है, इससे राष्ट्रीय राजनीति किस हद तक प्रभावित हुई है और इसने राज्यों की राजनीति को किन रूपों में प्रभावित किया है? यहाँ पर 'हाल के दिनों' की व्याख्या उत्तर के दायरे के निर्धारण में अहम् भूमिका निभायेगी। चूँकि लोकसभा-चुनाव, 2009 से ही फिर से राष्ट्रीय दलों के उभार की प्रक्रिया तेज हुई है और उनके सापेक्ष क्षेत्रीय दलों की भूमिका पहले की तुलना में कहीं कम महत्वपूर्ण हुई है, इसीलिए 'हाल के दिनों' की व्याख्या पिछले तीन दशकों के परिप्रेक्ष्य में करते हुए इस बात को भी रेखांकित किया जाना चाहिए कि हाल के वर्षों में क्षेत्रीय दलों की भूमिका में कहीं अधिक तेजी से बदलाव आया है। इसने राष्ट्रीग्र राजनीतिक दलों के स्वरुप एवं संरचना को भी प्रभावित किया है।

4. संविधान और संवैधानिकता के बीच क्या अंतर है? भारत के सुप्रीम कोर्ट के द्वारा अनुमोदित 'मूल संरचना' के सिद्धांत के विषय में गंभीरता से जाँच करें।

पिछले पाँच वर्षों के दौरान वर्तमान सरकार में विभिन्न संवैधानिक पदों पर आसीन लोगों ने समय-समय पर प्रस्तावना में उल्लिखित 'पंथनिरपेक्षता' शब्द को हटाये जाने से सम्बंधित बयान जारी किए। इसी पृष्ठभूमि में संविधान की मूलभूत विशेषताओं, संविधान एवं संवैधानिकता पर चर्चा शुरू हुई और यह कहा गया कि चूँकि सुप्रीम कोर्ट के विभिन्न निर्णयों में 'पंथनिरपेक्षता' को संविधान की मूलभूत विशेषताओं के रूप में रेखांकित किया गया है, इसीलिए ऐसा कोई भी संशोधन संविधान की मूल भावनाओं के प्रतिकूल होने के कारण असंवैधानिक होगा।

यहाँ पर यह स्पष्ट करना भी आवश्यक प्रतीत होता है कि हिन्दी में इस प्रश्न में अंग्रेजी के 'कांस्टिट्यूशनलिज्म' टर्म के लिए 'संवैधानिकता' शब्द का इस्तेमाल किया गया है, जबकि इसका अनुवाद होता है 'संविधानवाद' और 'संवैधानिकता' के लिए अँग्रेजी में 'कांस्टिट्यूशनलिटी' शब्द का इस्तेमाल होता है। इसलिए इस प्रश्न में सबसे पहले संविधान, संवैधानिकता एवं संविधानवाद में अंतर को रेखांकित किया जाना अपेक्षित है, और फिर इसी के आलोक में मूल संरचना के विविध पहलुओं के प्रश्न पर विचार किया जाना चाहिए। इस क्रम में यह स्पष्ट किया जाना अपेक्षित है कि मूल संरचना का सिद्धांत किस प्रकार संविधानवाद को प्रभावित करता है और इस आलोक में इसका क्या औचित्य है।

5. **केंद्र-प्रायोजित योजनायें केंद्र एवं राज्यों के बीच हमेशा विवाद का मुद्दा रही हैं। प्रासंगिक उदाहरणों का हवाला देते हुए चर्चा करें।**

इस प्रश्न को चौदहवें वित्त-आयोग की अनुशंसाओं के आलोक में देखे जाने की जरुरत है जिसने केंद्र-प्रायोजित योजनाओं को एक बार फिर से चर्चा में लाने का काम किया और फ्लेक्सी फण्ड की अवधारणा प्रस्तुत करते हुए राज्यों की आपत्तियों के निराकरण की कोशिश की। यही वह पृष्ठभूमि है जिसमें इस प्रश्न का उत्तर लिखते हुए इन योजनाओं के सन्दर्भ में राज्य की आपत्तियों और उन आपत्तियों के औचित्य के प्रश्न पर विचार करना चाहिए। इस क्रम में यह दिखाया जाना चाहिए कि किस प्रकार राज्यों को अपनी प्राथमिकताओं से समझौता करते हुए और उसकी उपेक्षा करते हुए केंद्र की प्राथमिकताओं के अनुरूप काम करना होता है जिससे उनका विकास प्रतिकूलतः प्रभावित होता है। इन बातों को केंद्र द्वारा प्रायोजित कुछ योजनाओं के सापेक्ष रखा जाना चाहिए, तब कहीं जाकर प्रश्न की माँग पूरी होगी।

इसी तरह का एक प्रश्न (53-55)वीं मुख्य परीक्षा के दौरान पूछा गया था

भारतीय संघीय व्यवस्था और केंद्र-राज्य के प्रशासनिक सम्बन्ध का राष्ट्रीय आतंकवाद रोधी परिषद (NCTC) के विशेष सन्दर्भ में वर्णन कीजिये। अगर इन प्रश्नों के आलोक में देखें, तो **15वें वित्त आयोग के गठन ने हाल में संघीय पहलुओं को लेकर जिस विवाद को जन्म** दिया है, उसने इस टॉपिक को महत्वपूर्ण बना दिया है। इसी प्रकार **दिल्ली सरकार बनाम् संघीय सरकार** के विवादों के आलोक में दिल्ली उच्च न्यायालय का निर्णय भी महत्वपूर्ण है और हाल में सरकारों के गठन या बर्खास्तगी की पृष्ठभूमि में संघवाद जैसे टॉपिक को महत्वपूर्ण बना दिया है। इसीलिए इन टॉपिकों पर विशेष रूप से ध्यान दिए जाने की जरुरत है।

(60-62)वीं बीपीएससी (मुख्य) परीक्षा

अप्रैल, 2018 में (60-62)वीं बीपीएससी (मुख्य) परीक्षा सम्पन्न हुई। (53-55)वीं बीपीएससी (मुख्य) परीक्षा से प्रश्नों की प्रकृति में बदलाव की जो प्रक्रिया शुरू हुई, उसे यहाँ पर तेज होते देखा जा सकता है। रुझानों में यह बदलाव भारतीय राजव्यवस्था खंड से पूछे जाने वाले प्रश्नों में कहीं अधिक परिलक्षित होता है। इसे इस परीक्षा में पूछे जाने वाले प्रश्नों के आलोक में सहज ही देखा जा सकता है:

1. **राज्य की नीति के निर्देशक तत्व पवित्र घोषणा-मात्र नहीं हैं, बल्कि राज्य की नीति के मार्ग-दर्शन के लिए सुस्पष्ट निर्देश निर्देश हैं। व्याख्या कीजिये और बताइए कि वे व्यवहार में कहाँ तक लागू किये गए हैं?**

बिहार लोक सेवा आयोग का रुझान हमेशा से अधिकारों से सम्बंधित मूलाधिकारों और नीति-निदेशक तत्वों की ओर रहा है। इस दृष्टि से इन प्रश्नों को पारंपरिक प्रश्नों की श्रेणी में रखा जा सकता है, लेकिन इस प्रश्न का समसामयिक सन्दर्भ भी है। हाल के वर्षों में महिला सशक्तीकरण, शराबबंदी, समान कार्य के लिए समान वेतन, स्वच्छ विकास और गोहत्या निषेध जैसे नीति-निदेशक तत्वों से सम्बंधित मसले चर्चा में रहे हैं और ये नीति-निदेशक तत्वों की बढ़ती अहमियत की ओर इशारा करते हैं।

इस प्रश्न के उत्तर में नीति-निदेशक तत्वों से सम्बंधित संविधान-निर्माताओं की चर्चा की जानी चाहिए। साथ ही, यह बतलाया जाना चाहिए कि किस प्रकार इसके सन्दर्भ में सुप्रीम कोर्ट की बदलती हुई धारणा ने इसे आदर्शवादी सदिच्छा मात्र नहीं रहने दिया, वरन् इसके क्रियान्वयन के मार्ग को प्रशस्त किया और इसका परिणाम यह है कि पिछले चार दशकों के दौरान इसके कई पहलुओं का व्यावहारिक रूप से क्रियान्वयन हो रहा है। प्रश्न का दूसरा हिस्सा उन पहलुओं को रेखांकित किये जाने की अपेक्षा करता है जिनका क्रियान्वयन देश एवं बिहार राज्य के स्तर पर हो रहा है।

2. **हिंदुत्व की अवधारणा का परीक्षण कीजिये। क्या यह धर्मनिरपेक्षवाद का विरोधी है?**

इस साल पूछे गए इस प्रश्न ने सबसे अधिक ध्यान आकर्षित किया है। यह प्रश्न भले ही पारंपरिक प्रकृति का लगता हो, पर यह समसामयिक परिदृश्य से कहीं अधिक प्रभावित है। सन् 2017 के आरम्भ में सुप्रीम कोर्ट का एक फैसला आया था जो चुनाव-प्रक्रिया के दौरान राजनीति में जाति एवं धर्म के इस्तेमाल पर रोक से सम्बंधित जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा से सम्बद्ध है। इसने एक बार फिर से हिंदुत्व मामला, 1995 में सुप्रीम कोर्ट के द्वारा दिए गए निर्णय को प्रासंगिक बना दिया।

इसी आलोक में हिंदुत्व की अवधारणा और धर्मनिरपेक्षता के अंतर्संबंध पर आधारित यह प्रश्न तो व्यापक समझ की अपेक्षा रखते हैं। जहाँ हिंदुत्व की संकल्पना विशुद्ध रूप से एक राजनीतिक संकल्पना है जिसका जनक हिंदुत्व-आधारित राष्ट्रवाद के जनक वी. डी. सावरकर

सार्थक संवाद

को जाता है और जिसे आक्रामक तरीके से हेडगेवार और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ ने आगे बढ़ाया और इसके जरिये धर्मनिरपेक्षता की उस संकल्पना को चुनौती देने की कोशिश की जो संविधान की मूल भावनाओं के साथ नाभिनाल-बद्ध है। इस हिंदुत्व को सन् 1995 में सुप्रीम कोर्ट के द्वारा परिभाषित हिंदुत्व से असम्बद्ध कर देखे जाने की जरुरत है। स्पष्ट है कि इसका सम्बन्ध हिन्दू राष्ट्र की संकल्पना से जाकर जुड़ता है और यह बहुसंख्यकों के वर्चस्व की वकालत करता है, इसीलिए यह धर्मनिरपेक्षता की मूल संकल्पना के प्रतिकूल है। इसी आलोक में इस प्रश्न के उत्तर लिखा जाना चाहिए।

3. भारतीय राजनीति के प्रमुख दबाव-समूहों की पहचान कीजिये और भारत की राजनीति में उनकी भूमिका का परीक्षण कीजिये।

इसी प्रकार दबाव-समूहों की भूमिका से सम्बंधित प्रश्न भले ही पारंपरिक लगते हों, पर जिस तरह से पिछले कुछ वर्षों के दौरान दक्षिणपंथी हिंदुत्व की ओर रुझान रखने वाले संगठनों ने ऐसे मुद्दों को उठाने की कोशिश की और सामाजिक तनाव को बढ़ाते हुए साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण की प्रक्रिया को तेजी प्रदान की, उसकी पृष्ठभूमि में ये प्रश्न पारंपरिक नहीं रह जाते हैं। हाल में ट्रिपल तलाक, बहु-विवाह और समान नागरिक संहिता के साथ-साथ अनु. 35।, अनु. 370 बहाने सांप्रदायिक एजेंडे को थोपने की कोशिशों को इसके परिप्रेक्ष्य में देखा जा सकता है। इस आलोक में देखें, तो गोरक्षा के नाम पर मॉब-लिंचिंग, दलितों एवं मुसलमानों का इसका शिकार होना और इस पर अंकुश लगाने के लिए सुप्रीम कोर्ट का निर्देश प्रश्न की दृष्टि से इस टॉपिक को महत्वपूर्ण बना देता है।

इतना ही नहीं, पिछले डेढ़ दशकों के दौरान जैसे-जैसे सरकारों और शासन पर कॉर्पोरेट शिकंजा मजबूत हुआ है, वैसे-वैसे एक्टिविज्म बढ़ता चला गया है और इसकी पृष्ठभूमि में दलित, आदिवासी और किसान मुखर होते चले गए जिसने सरकारों पर दबाव बनाते हुए उन्हें अपनी नीतियों पर पुनर्विचार के लिए विवश किया है। इसीलिए इस व्यापक परिप्रेक्ष्य में इस प्रश्न को रखकर देखे बगैर इसके साथ न्याय नहीं किया जा सकता है।

4. बिहार की राजनीति में राज्यपाल की शक्तियों और वास्तविक स्थिति का वर्णन कीजिये।

यह प्रश्न पारंपरिक प्रकृति का है। इस प्रश्न के दो आयाम हैं: एक, राज्यपाल की शक्तियाँ; और दूसरी, उसकी वास्तविक स्थिति। इस प्रश्न का उत्तर लिखते वक्त राज्यपाल की शक्तियों की चर्चा करनी है, और उसकी वास्तविक स्थिति का वर्णन करते वक्त दो बातें दिखानी हैं: एक तो यह कि राज्यपाल को इन शक्तियों का प्रयोग मुख्यमंत्री एवं मंत्रिपरिषद की सलाह पर करना होता है और इस संवैधानिक बाध्यता के कारण राज्य कार्यपालिका शक्ति के प्रधान के रूप में उसकी स्थिति औपचारिक बनकर रह जाती है, लेकिन राज्यपाल के स्वविवेक का अधिकार उसकी स्थिति को राष्ट्रपति की तुलना में कहीं अधिक अधिकार-सम्पन्न बनाता है; और दूसरा यह कि किस प्रकार राज्यपाल की नियुक्ति एवं बर्खास्तगी-प्रक्रिया उसे केंद्र पर निर्भर बनाती है और फिर उसे अपने अधिकारों का इस्तेमाल केंद्र के इशारों पर करना होता है। इन तमाम आयामों को समेटने की स्थिति में ही उत्तर में समग्रता संभव हो पायेगी और बेहतर अंक मिल पायेंगे।

5. मानवाधिकारों से आप क्या समझते हैं? संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा,1948 पर प्रकाश डालिए। बिहार सरकार द्वारा पिछले एक दशक में इन्हें बढ़ावा देने हेतु क्या प्रमुख प्रयास किये गए?

यद्यपि मानवाधिकार और इसे सुनिश्चित करने के लिए बिहार सरकार के द्वारा किये जा रहे प्रयासों से सम्बंधित यह प्रश्न करेंट सेक्शन में पूछा गया, तथापि इस प्रश्न का सम्बंध भारतीय राजव्यवस्था एवं संविधान खंड से जुड़ता है। यह इस खंड के बढ़ते दायरे और बीपीएससी के द्वारा नए आयामों की तलाश की ओर भी इशारा करता है। हो सकता है कि यह आपवादिक रुझान हो, पर इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती है।

इस प्रश्न के पहले हिस्से में मानवाधिकारों को परिभाषित किये जाने की जरूरत है और ऐसा करते वक्त यह दिखलाया जाना चाहिए कि किस प्रकार भारत का संविधान स्पष्ट शब्दों में मानवाधिकारों के उल्लेख से परहेज करता हुआ भी मौलिक अधिकारों एवं नीति-निदेशक तत्वों के अंतर्गत तमाम मानवाधिकारों को समाहित करता है। प्रश्न के दूसरे हिस्से में मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा,1948 की चर्चा करनी है, और फिर प्रश्न के तीसरे हिस्से में मानवाधिकारों के प्रोत्साहन एवं संरक्षण के लिए बिहार सरकार के द्वारा किये जाने वाले प्रयासों और इसकी प्रभाविता का उल्लेख करना है।

भारतीय राजव्यवस्था खंड से अबतक पूछे गए प्रश्न

56-59वीं बीपीएससी	53-55वीं बीपीएससी	48-52वीं बीपीएससी	47वीं बीपीएससी	46वीं बीपीएससी
1. भारतीय संविधान द्वारा प्रदत मौलिक अधिकारों का वर्णन कीजिये। किस प्रकार अनु. 21 की न्यायिक व्याख्याओं ने जीवन के अधिकार के विषय क्षेत्र का विस्तार किया है? 2. भारतीय चुनावी राजनीति में जाति की भूमिका का आकलन कीजिये। बिहार के 2015 के चुनाव को जाति की भूमिका ने किस सीमा तक प्रभावित किया? 3. भारतीय संघात्मक व्यवस्था में केंद्र और राज्यों के मध्य तनाव के क्षेत्रों का विश्लेषण कीजिये। वर्तमान समय में संघीय सरकार तथा बिहार राज्य के मध्य संबंधों का वर्णन कीजिये। 4. न्यायिक पुनरीक्षण से आपका क्या अभिप्राय है? भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित 'मूल ढांचे' के सिद्धांत का आलोचनात्मक वर्णन कीजिये। 5. एक सुनिश्चित एवं संगठित स्थानीय स्तर की शासन प्रणाली के अभाव में पंचायतें एवं समीतियाँ, मुख्यत: राजनीतिक संस्थाएं बनी रहती हैं और शासन प्रणाली की उपकरण नहीं बन पाती हैं। आलोचनात्मक समीक्षा कीजिये।	1. भारतीय संघीय व्यवस्था और केंद्र-राज्य के प्रशासनिक सम्बन्ध का राष्ट्रीय आतंकवाद रोधी परिषद (NCTC) के विशेष सन्दर्भ में वर्णन कीजिये। 2. राज्यपाल की शक्ति और कार्यो तथा इनकी बिहार में भूमिका का वर्णन कीजिये. 3. भारत में निर्वाचन आयोग की शक्ति और कार्यप्रणाली एवं स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव में इनकी भूमिका का परिक्षण कीजिये। 4. विभिन्न नीति निर्देशक सिद्धांतों का वर्णन कीजिये। 1950 के बाद बिहार में इन्हें किस तरह से क्रियान्वित किया गया है? 5. 1991 से बिहार के राजकीय शासन के राजकीय परिवर्तन की चर्चा करें।	1. जाति एवं वर्ग भारतीय राजनीति में महतवपूर्ण भूमिका निभाते हैं. इस उक्ति की व्याख्या बिहार के सन्दर्भ में करें। 2. बिहार के सन्दर्भ में ग्राम्य स्थानीय सरकार की कार्यो की 1994 से आज तक की व्याख्या करें। 3. मिली जुली राजनीति भारतीय सन्दर्भ का प्रमुख लक्षण हो गया है। परंतु यह व्यवस्था अभी तक स्थायी सरकार देने में असफल रही है। अपनी राय दें। 4. भारतीय संघीय व्यवस्था में सामयिक दिगों (Recent Trends) की व्याख्या करें. क्या राज्यों को अधिक क्षमता (Autonomy) की आवश्यकता है? 5. किन्हीं दो पर टिप्पणी लिखे- a. मनरेगा b. सार्वभौम मानव अधिकार घोषणा c. भारत में साम्प्रदायिकता की समस्या	1. "चुनाव लोकतंत्र की ह्रदय गति के समान है। यदि वे भुत जल्दी-जल्दी या बहुत अनियमित रूप से होते है तो लोकतंत्र का पतन हो सकता है।" भारतीय राजनीति के सन्दर्भ में मध्यावधि चुनावों पर अपने विचार अभिव्यक्त करें। 2. आरक्षण का मुद्दा राजनैतिक दलों के वोट-बैंक के दृढ़ीकरण के अतिरिक्त कुछ नही है। शोषित वर्ग को सामाजिक न्याय प्रदान करवाने के लिए आरक्षण के अतिरिक्त आप क्या उपाय सुझायेंगे? 3. टिप्पणी लिखे- a. पारदर्शी एवं जवाबदेह शासन के साधन RTI अधिनियम- b. भारतीय जीवन व संस्कृति पर मीडिया (प्रसार माध्यम) का प्रभाव c. भारतीय राजनीति में जातीवाद- बिहार के विशेष सन्दर्भ में। 4. ग्राम्य स्तर पर राजनैतिक चेतना एवं नारी-सशक्तिकरण पर 73वें संविधान-संशोधन के प्रभावों का बिहार के विशेष सन्दर्भ में परिक्षण कीजिये।	1. भारतीय चुनाव आयोग के निर्देशन के अंतर्गत अबाध और निष्पक्ष चुनाव के संचालन में नौकरशाही की भूमिका की चर्चा करें। 2. 73वें संवैधान-संशोधन अधिनियम के आधारभूत प्रावधानों का वर्णन करें। 3. चुनाव-प्रचार से आप क्या समझते है? बिहार के चुनाव प्रचार की महत्वपूर्ण पद्धतियों पर प्रकाश डालें। 4. भारतीय राजनीति में भाषा की भूमिका का विवेचन करें। बिहार में भाषाई संख्या लघुओं (Linguistic Minorities) के लिए प्रावधानों का वर्णन करें। 5. सामजिक-राजनितिक स्थिति के परिप्रेक्ष्य में बिहार में कारागृह प्रशासन पर अपना मत दीजिये।

मुख्य परीक्षा के लिए महत्वपूर्ण टॉपिकः

सबसे पहले **भारतीय संविधान की प्रस्तावना** को लिया जाय। यहाँ से सामान्य प्रकृति के ऐसे प्रश्न पूछे जा सकते हैं:

1. "भारतीय संविधान में प्रस्तावना के महत्व को रेखांकित करते हुए इसकी वैधानिक स्थिति को स्पष्ट करें।"

लेकिन, हाल में प्रस्तावना जिस तरह से चर्चा में रही है, उसके मद्देनजर इस प्रश्न के पूछे जाने की संभावना प्रबल है कि:

2. "'पंथनिरपेक्षता' और 'धर्मनिरपेक्षता' के फर्क को स्पष्ट करें। साथ ही, बयालीसवें संविधान-संशोधन के द्वारा भारतीय संविधान की प्रस्तावना में पंथनिरपेक्षता और 'समाजवाद' शब्द को शामिल करने के औचित्य के प्रश्न पर विचार करते हुए बतलाइए कि क्यों नहीं इन्हें प्रस्तावना से हटा दिया जाए?"

यहाँ से भारतीय राज्य की समाजवादी एवं धर्मनिरपेक्ष प्रकृति को आधार बनाकर भी प्रश्न पूछे जाने की संभावना बनती है। प्रस्तावना से ही सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय महत्वपूर्ण टॉपिक है जो पूरे बिहार विधानसभा-चुनाव के दौरान चर्चा में रहा था।

प्रस्तावना के बाद **नागरिकता, मौलिक अधिकार, नीति निदेशक-तत्व तथा मौलिक कर्तव्य** दूसरा महत्वपूर्ण टॉपिक है जहाँ से प्रश्न की संभावना बनती है। वर्तमान राष्ट्रीय राजनीतिक परिदृश्य में इस खण्ड से अभिव्यक्ति की आजादी, जानने का अधिकार, सूचना का अधिकार, सोशल मीडिया की भूमिका, धर्मान्तरण, अल्पसंख्यक-प्रश्न, समान नागरिक संहिता (UCC), गरिमामय जीवन के अधिकार, बिहार में महिला-सशक्तीकरण में आरक्षण की भूमिका, आरक्षण और सामाजिक न्याय से जुड़े हुए पहलुओं से प्रश्न पूछे जाने की पूरी सम्भावना है। इसी प्रकार मूलाधिकार एवं नीति निदेशक-तत्व के बीच के विवाद के साथ-साथ इसके क्रियान्वयन से सम्बंधित पहलुओं पर भी प्रश्न पूछे जाने की सम्भावना है। यहाँ पर इस बात को ध्यान में रखने की जरुरत है कि इन प्रश्नों को बिहार के विशेष सन्दर्भों में तैयार किया जाए।

सरकार के विभिन्न अंगों में विधायिका से अप्रासंगिक होता दल-बदल कानून, विपक्षी दल की भूमिका, विधायन की प्रक्रिया से सम्बंधित विवाद, संसदीय गतिरोध, संसदीय सुधार आदि जैसे टॉपिक महत्वपूर्ण हैं। **कार्यपालिका के अंतर्गत** अध्यादेशों के जरिए विधायन, कोरोना-संकट के कारण संसद के प्रति कार्यपालिका की जवाबदेही का कमजोर पड़ना, प्रधानमंत्रीय शासन की संकल्पना, राज्यपाल की भूमिका एवं इससे सम्बंधित विवाद आदि से जोड़कर प्रश्न पूछे जा सकते हैं। जहाँ तक **न्यायपालिका का प्रश्न** है, न्यायाधीशों की नियुक्ति से संबंधित विवाद, कालेजियम व्यवस्था, न्यायपालिका की स्वतंत्रता एवं निष्पक्षता, न्यायिक-सुधार, न्यायिक सक्रियता-न्यायिक अतिक्रम, न्यायिक पुनर्विलोकन आदि से सम्बंधित टॉपिक महत्वपूर्ण हैं।

जहाँ तक **संघ-राज्य सम्बन्ध और संघवाद** का प्रश्न है, तो यह खंड मुख्य परीक्षा की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। पिछले कुछ वर्षों के दौरान केंद्र सरकार के द्वारा अनु. 356 के दुरूपयोग, दल-बदल कानून की विधानसभा स्पीकर के द्वारा मनमानी व्याख्या, विधानसभा स्पीकर एवं राज्यपाल के द्वारा संविधान-प्रदत्त शक्तियों का दुरूपयोग और इस सन्दर्भ में सुप्रीम कोर्ट के निर्णयों ने संघ-राज्य सम्बन्ध और संघवाद के प्रश्न को एक बार फिर से चर्चा के केंद्र में ला दिया है। इसी तरह कोरोना-संकट की पृष्ठभूमि में किस प्रकार संघ-राज्य संतुलन प्रतिकूलतः प्रभावित हुआ है, सन्दर्भ चाहे जीएसटी का हो या आपदा-प्रबंधन अधिनियम एवं लॉकडाउन का, इस प्रश्न पर विचार किये जाने की आवश्यकता है। इन पहलुओं पर विचार के क्रम में इस बात को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि आखिर वे कौन-सी चीजें हैं जो राज्यपाल एवं स्पीकर के पद को विवादास्पद बनाती हैं और इन्हें राजनीति एवं विवाद से परे रखने के लिए क्या किया जाना चाहिए? निश्चय ही, इसका सम्बन्ध राज्यपाल की नियुक्ति, स्थानांतरण एवं बर्खास्तगी की प्रक्रिया के साथ-साथ राज्यपाल के विवेकाधिकार से जाकर जुड़ता है। इसी प्रकार सहकारी एवं प्रतिस्पर्धी संघवाद के प्रश्न पर भारत के समक्ष मौजूद राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय चुनौतियों और जीएसटी, नीति-आयोग एवं पन्द्रहवें वित्त-आयोग के आलोक में पुनर्विचार अपेक्षित है।

इसके अलावा **स्थानीय संस्थाएँ** एवं राजनीतिक-सामाजिक-आर्थिक समावेशन में इसकी भूमिका के साथ-साथ न्यूनतम शैक्षिक एवं स्वच्छता मानदंड के सन्दर्भ में सुप्रीम कोर्ट का निर्णय महत्वपूर्ण है। इस क्रम में स्थानीय संस्था के चुनावों में राजनीतिक दलों को प्रत्यक्ष भूमिका प्रदान किये जाने के प्रश्न पर विचार भी अपेक्षित है।

सार्थक संवाद

जहाँ तक **चुनावी-राजनीति, मतदान-आचरण और चुनाव-सुधार** का प्रश्न है, तो पिछले ढ़ाई दशकों के दौरान बिहार में आनेवाले सामाजिक बदलावों में चुनावी राजनीती और इनमें आनेवाले परिवर्तनों की भूमिका, चुनावी आचार-संहिता, हालिया सम्पन्न बिहार विधानसभा-चुनाव के परिणामों का विश्लेषण; राजनीति का अपराधीकरण; भारतीय राजनीति के साथ-साथ बिहार की राजनीति में जाति एवं धर्म के साथ-साथ लिंग एवं भाषा, धनबल, सोशल मीडिया और तकनीक की भूमिका; पहचान-आधारित चुनावी-राजनीति एवं इस सन्दर्भ में सुप्रीम कोर्ट का निर्णय, स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव को सुनिश्चित करने में चुनाव आयोग एवं ब्यूरोक्रेसी की भूमिका, राजनीतिक दलों में आतंरिक लोकतंत्र का प्रश्न, वंशवादी राजनीति (Dynestic Politics), चुनावी-चंदे में पारदर्शिता, 'वन नेशन वन इलेक्शन' अर्थात् एक साथ लोकसभा एवं विधानसभा चुनाव, मुद्दों पर आधारित राजनीति बनाम् व्यक्ति-केन्द्रित राजनीति, हालिया लोकसभा एवं राज्य विधानसभा चुनावों में मतदान-आचरण के निर्धारक तत्व एवं इसके निहितार्थ, चुनाव-सुधार के सन्दर्भ में चुनाव आयोग के सुझाव (अद्यतन) आदि से संबंधित प्रश्न पूछे जाने की संभावना है। हाल में सम्पन्न **बिहार विधानसभा चुनाव, 2020 के विशेष सन्दर्भ में** प्रश्न पूछे जाने की सम्भावना प्रबल है: सन्दर्भ चाहे चुनावी एजेंडे, मतदान-आचरण और चुनाव-परिणामों के विश्लेषण का हो या फिर पोस्टल बैलट को लेकर उत्पन्न विवादों का, सन्दर्भ चाहे साइलेंट वोटर्स का हो या फिर महिला वोटबैंक की भूमिका का।

स्रोत-सामग्री:

1. सार्थक भारतीय राजव्यवस्था: कुमार सर्वेश
2. sarthaksamwad.blogspot.com
3. sarthak samwad YouTube Channel
4. News Paper: The Hindu, The Indian Express

सार्थक संवाद